

. जीहारिका

श्रीशभूदयाल सरसेना

बीकानेर
नवयुग ग्रन्थ-कुटीर

प्रकाशक
नवयुग ग्रन्थ-कुटीर
पुस्तक प्रकाशक और विक्रेता
बीकानर

मूल्य डल रुपया
१०००
प्रथम बार
७-१-१९४१

मुद्रक
सटिया जैन प्रिंटिंग प्रेस
बीकानर

दो वाते

कवि, तुम कहीं जा रहे हो ?—इस जिज्ञासा का उत्तर चिरकात से लिया जा रहा है । व्याम-वात्मीकि, होमर और वर्जिल, कालिदास और भयभूति, तुलसीदास और सूरदास, शेक्सपियर और मिल्टन आदि महामनीषी कवि-गण शत-शत कठ से इस प्रश्न के समाधान में लगे रहे हैं । उन्होंने नाना स्वर और लिपियों में, विविध छन्द और लय में, इस अमृत उत्सुकता की परितृप्ति की चेष्टा की है । अपने हृदय को उन्होंने बूद-बूद करके निचोड़ दिया है । उपमाओं, रूपकों और उत्प्रेक्षाओं में उन्होंने कहने से क्या छोड़ा है ? परन्तु क्या वे कह सकते हैं ? क्या वह सनातन जिज्ञासा आज भी ज्यों की त्यों नहीं बनी हुई है ? सच पूछो तो वैदिक मानस का यह प्रश्न कि कवि, तुम कहीं जा रहे हो ? बीसवीं शताब्दी के मानस का भी प्रश्न है । हम जहाँ-तहाँ अक्सर मिलते ही पृष्ठ उठते हैं—कवि, तुम कहीं जा रहे हो ? रवीन्द्रनाथ 'गीताजली' लाकर हमारे सामने रख देते हैं । पन्त, 'प्रसाद', 'निराला' और महादेवी में से कोई छायावाद ले आता है, कोई रहस्यवाद—कोई कुछ, कोई कुछ । यथ-शक्य सब कुछ प्रस्तुत करके वे इस चिरन्तन समस्या का उत्तर देने की चेष्टा ही तो करते हैं । हालावाद और

प्रगतिवाद भी अपने अपने ढंग से कवि की प्रगति को बताना चाहते हैं। सच तो यह है, कि इसे गोल कर नहीं रखा जा सकता और यदि कवि इसे गोल कर रख सके तो वह कवि ही न रहे। मारा माहित्य ममन्त शिल्प कलाकार के इसी प्रयत्न से परित्र, अनुप्राणित और रमणीय है। अजन्ता और इलोरा के चित्र-शिल्प में हृदय की इसी उड़ान को अंकित किया गया है। ज्यों ज्यों कवि अपने को स्पष्ट करने को चला है त्यों त्यों वह अस्पष्ट होता गया है। उमकी वाणी उमी कूम से दूरा-गत सगीत की क्षीण स्वर-ताहरी का रूप धारण करती गई है। इसीलिए कवि और कलाकार के सामने शूद्रा से धारणार सिर भुंकाकर भी लोक-हृदय उसके साथ पग मिला कर अगि दूर चल नहीं पाया। तोक जीवन के लिये कवि कवि ही रह गया है, और रह जाना ही कवि और कान्य एव लोक-जीवन सनके लिए ठीक हुआ है।

आज हम अलोचना प्रत्यालोचना करके उस पुरातन प्रश्न का समाधान पा लेना चाहते हैं। प्रत्येक कवि की शैली में किसी न किसी वाद की स्थापना करके हम कवि की अभिव्यक्ति पर भाष्य प्रस्तुत करते हैं और अपनी समझ से कवि और कान्य के लक्ष्य को पा लेना चाहते हैं। हमारा सभालोचक अपनी ओर से कान्य की नई से नई परिभाषा करता है। अद्यतक की अपूर्णताओं के ऊपर तैर कर वह उस रहस्य को अनामृत कर देना चाहता

है जो स्वयं कवि के द्वारा नहीं हो सपना है। अपने बुद्धि और हृदय के योग में यह मृग्य गहरे उतर जाता है और मृद-एक तार को हिलाकर कवि के मनोनीन आदेश को गोंज फरता है। परन्तु मममन जातवारी के साथ भी कुछ अज्ञात और अगोचर रह जाता है। जो अगोचर के साथ अनिर्वच्य भी है। यही साहित्य, शिल्प और कला का प्राण है। यह अनुभवगम्य तो है अभिव्यक्तिगम्य नहीं है। अथवा या वह कि ज्यों ज्यों अभिव्यक्ति विस्तृत होती जाती है त्यों-त्यों यह मूमनर होता जाता है। यह मनुष्य के अन्तःकरण को आनन्द की मन्दाकिनी में मना कर सकता है, पर रमस्रोत को जन्म दे सकता है। उसी को लक्ष्य करके एक स्थान पर 'प्रेमी' ने कहा है कि मेरा और कविता का वरमों का साथ है पर मैं उसे जानने का राज नहीं कर सकता। तोरु हृदय काव्य को पदर रोन गद्गद् होता है। कवि नई नई रचनाएँ कर अपने को धन्य मममता है पर-कवि तुम कहाँ जा रहे हो ?-यह प्रश्न सदा होठों पर खता ही रहता है। यही चिरकाल से आस्थादन भिये जानेवाले काव्य-रस को विरस नहीं होने देता।

प्रस्तुत रचना और और औचित्य दूसरी रचनाओं का रहस्य यही है। इसी प्रश्न के उत्तर म्यरूप अच्छी-बुरी ममस्त रचनाएँ हैं। मेरी इस 'नीहारिका' में कुछरे का धुधलापन ही विशेष है, सृष्टि और प्रकाश का यदि आभाममात्र इस

मे मिल जाय, तो लेखनी, कागज और मसि सभी सार्थक हुए, ऐसा समझना । यह नीर-वीर-विनेरु पाठकों पर है । मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि मेने अपनी ओर मे कृपणता नहीं की । रक की भोली से जितनी निधि की आशा की जा सकती है वह उत्पत्तापूर्वक छुटा टालने पर मैं तो कृपणता के ढोप से मुक्त होगया ।

इस अन्विचन प्रयास के पीछे मित्रों और पूज्यों के जो प्रोत्साहन और आशीर्वाद हैं वे ही इसे पाठकों के सामने ला रहे हैं । यदि इसमें कुछ उन्हें ऐसा मिल सके जो कवि के मतत प्रयास में एक कणतक बन सकने की योग्यता रखता हो, तो इसका श्रेय उन्हीं की शुभेच्छाओं को है ।

कुटीर बीर नेर

सकसेना

दीपावली, १९४१

सूची

१	समर्पण	
२	आह्वान	१
३	चारण का गीत	३
४	प्रेमतीर्थ	५
५	भारतभूमि की यात्रा में	८
६	जिज्ञासा	१०
७	आशाओं का मन्दिर था	१०
८	बचपन	१४
९	निवेदन	१६
१०	शेष अभिलाष	१८
११	वे यदि आयें	२०
१२	रत्नलिहान के गीत पर	२१
१३	प्रेम की याद में	२३
१४	उनका आना	२५
१५	पूजा	२७
१६	में	२८
१७	दुःख के शोक में	३०
१८	अतीत स्मृति ;	३३
१९	आर्पण	३५

२०	आश्वासन	३७
२१	अनुरोध	३८
२२	वञ्चिता	३९
२३	परदा	४०
२४	बह हार	४१
२५	रहस्यवादी	४२
२६	वचिता मा से	४४
२७	स्मृति	४६
२८	चित्राकरण	४८
२९	दुहिता के शोक मे	४९
३०	विरहिणी की दुनियाँ	५१
३१	पदार्पण	५३
३२	सन्देश	५५
३३	सौंदर्य	५६
३४	उपेक्षित का प्रयास	५८
३५	यदि	५९
३६	उनका व्यवहार	६०
३७	शूलफल	६१
३८	मुग्धा से	६२
३९	पदार्पण वेला	६३
४०	जीवन सगीत	६५
४१	कविता का मन्दिर	६८
४२	वाच्छा	७५
४३	जीवन का अभिनन्दन	७७

४१	सृष्टि का माता	८
४२	विषय का मूल्य	१३
४६	अनर्पेता	१८
४७	परिवार	१९
४८	पतिव्रता	२१
४९	समाचारना	२६
५०	आभा	२७
५१	जीवन का नार	२८
५२	मनार	२९
५३	प्रता	३०
५४	मृष्टि और मृष्टा के प्रति	३१
५५	आमरण	३३
५६	मोट	३४
५७	तरंगना	३५
५८	माता	३७
५९	धर्म	३८
६०	मिना पिशा	३९
६१	पानपुर के प्रति	४०
६२	अंतर की आग	४२
६३	तापना	४३
६४	विपदाग्रहा के उद्धार	४४
६५	जीवननिर्माण	४६
६६	नारी	४७
६७	प्रेम या अभिशाप	४७

६८	भारत गीत	१३०
६९	वन्दी की आह	१३०
७०	मोहनवारण	१३४
७१	स्वप्न	१३६
७२	राया बचपन	१३८

समर्पण

दुःखों को मुन मुन बनाकर
बुराई पर भांगू ।
पान माता पर धर रसा मी
नर प्रिय गिरगु ।

दूर माता पर दान मन मे
रक्षा रवि पारि ।
न्याय का उदरग बना ला
पुनर मेरी भातें ।

मेरा क्या, का मन मुन मुन ही
ला है नाथ मुन्दारा ।
अर्थ विन्दु व लिए भला
सरोच भाष यह सारा ।

नीहारिका

आह्वान

कैम आता है उज्ज्वल गति
कैम आता है तार
दमी लक्ष तुम भी आतामा
भर प्राणों व प्यार

* प्रबल चाह व भोंव में उर
आभा मेर श्यामल धन
अपने आन्धादन मे भर दा
सुना मेरा ह य-भगत

मेर म्बनों क शिली, आसो
मेरी निद्रा व सग
जागृति व क्षयि-मन्दिर म भर
जाओ तनिक सुनहले रंग

आलिगन को बड़े हुए इन
 हाथों का छूने आओ
 वणी का ऊँचे पर मेरी
 आकर तुम लहरा जाओ

अपना विपुल कहानी कहने को
 आतुर ह सजल नयन
 गरमा जाओ भूलन दिखाकर
 ॐ हमारे जीवनधन !

नियमों के कठोर प्रतिपालक !
 नियमों को तज कर आओ
 मेर देव समय के सहचर !
 असमय में ही आजाओ

ए मेर असवर्ण ! वर्षों का
 ज्ञान में मत करो विचार
 भातुक मेर ! प्रणय जगत में
 सभी हो रहा एकाकार !

जीवन के अवकाश मनोहर
 बंधन हरने को आओ
 पर प्रवृत्ति का मोह जाल तुम
 अपने साथ लिये आओ !

चारण का गीत

भाइ रण को चला, बहिन !
तुम रक्षा बधन लामो तो ।
हम हँस तिलक करो, जय जाय
गीत विजय के गामो तो ।

आर चल जाने पर बनर
देरा सेविका धामो ता ।
पग पग पर आहत वीरों पर
करुणाजल बरसामो ता ।

रज्जुहीन ह पोत वीर हैं
सकट में—मुन पामो ता ।
राम से कंगो को भ्रपन
सकर रज्जु बनामो तो ।

निःश्ल निकल कर सरसिज-नयनी
मुकुमारी सय जामो तो
पैरा में छाल पडने हों
किन्तु न तुम घनढामो तो

श्रान्त श्रान्त प्रियतम नो पाओ
 जा रण में बट जाओ तो ।
 प्रन्त प्रन्तभय मैंन्य मिन्यु में
 ज्यार प्रचंड उठाओ तो ।

बिनली सा चमक, रणचण
 का वह रूप दिग्गभा ता ।
 प्रलय प्रन्त हो शत्रु जय श्री
 स्वामी का दे पाभा ता ।

भाभा चुपके चला नगर म,
 स्वागत-मान सनाभा तो ।
 द्वार हत्य का गृय, प्रेम का
 दापन मन्त्रु जगाओ तो ।

रणदधी, गृहदवा बनकर
 मुख पर मृदुता लामा तो ।
 भायें प्राणेश्वर जन, पय में
 मृदु मुसकान विछामा ता ।

प्रेमनीर्थ

चूर चूर होगया जहा
सगिता का एक किनारा ।
बर्नी बडा या रूमी हमारे
पूत प्रेम नी धारा ।

जहा कलरा लेरर खुलबखुए
भरने झानी पाना ।
पनघट की ईटा पर झक्ति
ह वह प्रेमरगानी ।

बन्यामों क खुद-भुनुम
करत ककरा रस-भीने ।
वहों प्रेम का प्याला लेरर
बैटे थ हन पीने ।

हराभरा था यह रमाल ने
सूखा दूठ राजा ह ।
तर उकमा था नहीं पि चा
यौवन से भाज जज ह ।

उस एक गानीर-गुंज था
 एना वितान थर था ।
 उत भुग्मुन व भागसाग था
 कर्नी प्रिया था पर था ।

एक रंगर मे एक पुत्र-गा
 मंदिर और निगर था ।
 नीम और पापन री ज्ञाया मे
 ज्ञाया कपर था ।

फूनों री डाली लकर
 लकर पूना री धाली ।
 यहीं वही मे धाली जाता
 था वह मनु मरानी ।

देवा का वरदान यगी पर
 प्राणप्रिया न पाया ।
 मेन भी वरदान-तुल्य था
 उसे यही अपनाया ।

गोपद चिहित माग, दूब
 मे हरी भरी यह धरती ।
 उन असरय स्मृतियों को मेर
 उर अतर मे भगती ।

नीहारिका

मेरु प्रेमताय क वरु ऋण
मे ह रमर पुगनी ।
त्रिमदा मधुर टाम से भरतीं
आने अविग्ल पानी ।

मातृभूमि की याद में

अग्रज अनुज जहाँ बसते
सुख-दुख नी चादर लान ,
बरसा करते जहाँ टाल स
पिक रूपात के गान ।

पत्र की ओर लग रहत
दो आशापूरित लाचन ।
धूप-झाह ल जहाँ विचरत
अम्बर में श्यामल घन ।

सरिताएँ कलकल बहती है
भर भर भरते भरन ।
जहाँ भुगड क भुगड निम्लभर
चलत है पशु चरने ।

जहाँ कृपकालाएँ लभर
हमिया गाती जाती ।
कन्याएँ कामल हाथा म
हमदम खेत निगती ।

बाह्यनिष्ठा

योद्धाओं ने रक्त बहा कर
जहाँ रणस्थल सींचे ,
मन अटका है उड़ चलने का
उसी गगन क नीचे ।

किन्तु हाथ कन्दायूह की य
तुग मुण्ड दीवारों ।
और निदुर्ग निर्मम घातकों
मर्मभेदिनी मां ।

चिन्ता चुन बैठा है, अमृत
का ह एक प्रतीक्षा ।
यही आज निश्चय जीवन की
होगा अन्तिम दीक्षा ।

तो हे काग ! उठा ल चलना
चुनचुन हाड हमार ।
और पवन तुम बहना दखा
राख चिन्ता की धार ।

बही छौदना, जहाँ शून्य में
पाल अमित भगव ।
घर हा मेरा खड़ा रक्ता
संकर भाव अनारो ।

जिज्ञासा

हृदय सुमन का माला लेकर
भक्ति भाव म आऊ ।
यत्नुर क्या तन ना । आपसी
प्रिय क्या क्यार्क ?

वशाकरण का मन्त्र माहना
जागृत कर विचन में,
मनमाहन का प्रेम विमाहित
तो क्या पाऊ मन में ?

तपभवन में शान्तिरत्न का
मणिमय अञ्चलि लेकर,
क्या कृतकृत्य करागे प्रियतम,
तन निच दर्शन देर ?

ज्ञासा को सयत करने मे,
क्या परदा सरसाकर ,
मुझे बचाते हुए मुरलिया,
शीघ्र मिलोगे आकर ?

नयन मृद नीचे निकुंज क
दग्ग साधना माधे ,
बाहु पाग में भरतु कया तुम
बाल उग्रग 'राधे' ।

आशाओं का मन्दिर था

आशा का मन्दिर था
तूना था नभ का तूनी ।
दखना कल्पना ही म
चिगरा चानी था तूना

कामना भगवत भगवति
सख झार दृष्टि थ पर !
प्राणा क दापर भलमल
थ तप-पवन क प्रेर !

तूना प्रेम का भातर,
सदान लिए जिहवा पर !
सैना से युला रहा था ,
रगित कर दिन भर निशि भर !

तूना में हृदय चडे थ
आसु का अघ्य बना था !
उत्सुकता की बेदी पर -
प्रार्थना वितान तना था !

नाहारिना

अनर्चना वह उचा,
वह नलरा इन्दु का धार ।
गिररुग निच आरुति खोहर
ग्रव स्मृति क रण सहार ।

गडहर में उसक डाला
नैराग्र्य निगा में धरा ।
वरगेगी कभी मयूमे,
हागा क्या कभी मररा ।

युग का परिकल्पन हागा
मन्वन्तर का दिन होगा ।
मेरा वः अभितव मन्त्रि
भी हागा या कि न होगा ।

बचपन

मन कुछ भूला, किन्तु नहीं म
उम बचपन को भूला ।
डाली डाली में था निमकी
पडा माद का भूला ।

ऊँची-नीची पग बनी था
अमित उभगा वाली ।
शुभर उधर सब भार बिड़ी थी
मन की हृव निराला ।

कीडा का उद्यान हमारा
आगामों की डोरी ।
साजन की व मधुर मलारें
मा की प्यारी लोरी ।

वात पात में आलों का
ययौत्सव मंत्रु मनाना ।
मचल मचल पर नतन करना
ढाक हुनक बुद्ध गाना ।

नोहारिका

सुख का ताना, दुःख का बाना
बुन-बुन जी बहताना ।
प्यार दुलार भर हाथा क
माठी धपकी पाना ।

साफ पडे मा जाना
उटफर दूध भात ही खाना ।
तन में धूल लपट फिरना
बातों में तुनाना ।

कर कर भूल भूत जाना
पाना उसमें भिड जाना
बचपन का उन मरल याद में
ह अनमोल खताना ।

निवेदन

धन मा और गगन मा प्रियतम
तुम गगलो पास ।
जग का शल्य सेन पर मेरा
पुन्ना ह निनास ।

क्षण क्षण क बन्धन म नन्दा
है य मातुल प्राण ।
बरसा दा इनक ऊपर प्रिय !
भंजु मधुर सुखमान ।

तारा का चरणा में तुमन
निया दव ! विभाम ।
आज अर्चिन की अजलि का
मिले वही श्रीभाम ।

है मृगाक गृहदीपक उस पर
अमित तुम्हारा प्यार ।
वहीं धन सकू ला दो जा में
मेरे यह सुविचार ।

नीहाग्नि

पवनद्वय परिचारक है तब
मन्दिर क ह नाथ ।
पीछ पाछ कहो कि आऊ
म भी उनक ' साथ ।

तन मन गौर विभव की है
अब कहों भूय या प्यास ।
अब ता अट्टर रही ह कब
एक तुम्हीं में आग ।

शेष अभिलाष

आता हूँ पर नाथ ! साथ
अभिलाष लिय आता हूँ ।
श्रीचरणों म यही एक
अवश्य निनय लाता हूँ ।

जन्मूँ निमी रूप में फिर
तो यही रम्य भूतल हा ।
यही प्राम्य जीवन, गरिता का
यही मधुर कलमल हा ।

यहा स्वजन हों, यही सखा हों
यहा मित्र हों प्यारे ।
यही हितैषी यही बन्धु हों
यही कुटुम्बा सारे ।

पशु पक्षी हों यही, यही
दूटाफूटा सा घर हा ।
हरेभरे हों खेत यही,
गहरा नीला सरवर हो ।

नाहरिका

यही मनोहर अरुणोदय हो
यही सांभ की लाली ।
यही मुनहले दिन हों मेरे
यहा निशा हो काली ।

तना वितान तुल्य यह प्यारा
विस्तृत मीलाम्बर हो ।
गीतन मन्द सुगन्ध प्रसहित
यही वायु सुन्दर हो ।

दसका पंक-कीट भी होना
मर मन भाता हो ।
उडते हुए वायु में इसक
कण कण से नाता हो ।

फिर फिर जन्म-मरु पुन पर
रहू न इससे न्यारा ।
इसी देश में राजवेश सं
रक रूप हो प्यारा ।

वे यदि आयें

मलयपवन बनकर आयें व
प्राण का अमराई में ।
ता पिक बनकर दूर उठगी
उनका मुक्ति वहाँ में ।

यदि आने हा लगे प्राणपन
मेर घर वसन्त हाकर
ता उनका सत्कार करूंगा
फूला का विलास बनकर ।

धनश्याम बनकर दायें व
ना मेरे पुर अम्बर में
उनक स्नेह मलिल को भरकर
लूगी तो उर अन्तर में ।

कर को किशलय कर लूगी म
तुहिन बिन्दु यदि हों प्रियतम
सचनि, रजनि में आना चाहें
तो मैं बन जाऊंगा तम ।

खलिहान के गीत पर

पबिक ' न जाने दा एद ध्यनि म
क्षय नीरवना भग ।
भरन ग अपना तरग में
उनक मन का रग ।

धात पक गये पर है वन्चा
उमरा हृदय अनोध ।
दगो, कहीं न मिल पाये उद्ग
उसे तुम्हारा शोध ।

अज्ञाना है भोलीभाली
उठा रही खलिहान
तान-तान म लुटा रही षट्
भीटे भीटे गान ।

कैसी फसन, मम पीटा की
कैसी मृदु मनुहार ।
भरती रोम रोम में कैसा
है वह सुगद खुमार ।

कमालालय की मर्म-कथा सा
 उपयुक्त का राग
 लोट लोट कर, गूँज गूँज कर
 छन्दरागा अनुराग ।

गत रत भावो में व्यञ्जित है
 कृपण-मुत्ता क शब्द ।
 अन्वित वर्तमान में करते
 कितने विगत शताब्द ।

गायन का है निपय मनोरम
 सुरा दुःख का समार ।
 पद पद पर चित्रित होते हैं,
 नारा नर गृह द्वार ।

अहा पवित्रर, शैलशृंग से
 अचल रहा गह मौन
 अभिलष स्वर लहरा निम्न में
 है न कहो मुख कौन ।

प्रेम की याद में

फूलों का चुन लिया न जाने
मन मधुवन से किमन ?
रातों को रच लिया मुनहले
लंकर अपना सपने ।

मेरे दण्ड की परछाई
चुरा लेगया काई ।
क्यों गई धरमान भारती
मेरी हाथ मँनाइ ?

वन गगनगगा का मेरी
मधुमय मजु सलोना
सुरभित करने गया कहा
जिस हृदय देश का कोना ?

जिस वायु की कृती बन ग
मेरे मुन की गंगा
जिन चरणों पर लोटेंगी हा !
मेरी यह दरमाजा ?

हृदि जा हृत्त उग्र था मेरी
 अन्त भी पलना में
 पाणिनात का कलिया थीं जा
 इन मेचक भ्रतों में

वे कमनीय रगना मेरी
 गाभा का वर विरणे,
 दिन नयनों की पुनती में हा !
 गर्द विरर पर तिरन ।

दौन कग्गा दूर अराजस्ता
 उम मर जग की ।
 उम बरनोर चार न रक्षा
 होगा क्योत्र मग का २

उनका आना

सखि, आत हा रहें किन्तु व
आयें कभी न मेरे घर ।
यह कैसा आना है उनका
कैसा ह उनका अन्तर !

रह जाना निमात्य अदृता
सुमुखि, सजाइ आला का
किन्तु न आना हो पाना उन
प्राणोपम बनमाली का ।

यना बनारस रूप मायुरी
रसता हू तित प्रति सखनी ।
पथ निहारने रम जाती हू
रीत-मानस का रचनी ।

कैसी ता भोली सुरा ह ?
कैसा किन्तु कंगोर हृदय ।
सुग्ध हमारे मन को ता भा
खाते है व सरा उदय ।

सखि, कुञ्ज जाइ सा पत्नी है
 उनकी शरमाली आये ।
 नहीं बनायो ता कैमे वे
 मनमानी कर कर राये ।

मे

म हूँ नील गगन का पक्षी
दूर तू है घर मेरा ।
मुक्त पवन वाहन पर चरकर
देता हूँ जग का परा ।

हरित श्यामघन वन हिम गिरिकर
हैं मेरे विधाम गगन ।
शिशु, राशि, पुष्प, पराग राग म
बसा हुआ है मेरा मन ।

मेरे रम्य कलेजर में है
तारावलि मनत लोचन ।
भ्रतुन अलौकिक प्राप्त हुआ है
जराहान मत्तय यौवन ।

कादम्बिनी हिंडोला बनकर
मुझे भुलाता है निनिन्दिन ।
नभगगा धोती प्रमुदित मन
य पासुत मम चरण नलिन ।

नीहारिका

न्यसितु व मानी सुजात हू
उम मानारोषर पर ,
जा भगम्य ह नती पदुचत
जटी गिरा व याहनर ।

यातचक मर दंगों के
बंपन मे उठते जग में ।
उत्रागों मे युम-युमधर रवि
धूमिल हा गिरते मा में ।

रिन्तु चना हा जाता हू मे
मन की करता रहता हू ।
निखिल विश्व की दया-भया का
रच न सिर पर गहता हू ।

दुख के शोक में

उम वसन्त में रग आया था
उध्वामित चित्त मवल्य ।
जलती हुई चिता पर तरा
अधी का ऐ हृदय सुमन ।

आर सभक लिया था, जीवन
क वसन्त का प्रन्त हुआ ।
और कुछ नहीं आश्चर्य ही
मेरे लिए अनन्त हुआ ।

साचा था रा रातर जलमय
एक समुद्र बना दूग ।
आहो आर विलापा क घन
म जीवन-जग द्या दूग

पर निपाद धन वाट लिया हा
हन्त ! प्रकृति क वण वण न ।
म द मन्द वन्ते सगार ने,
पूनों ने, वन-उपरन न ।

नीहारिणी

वारिद राने लगे गिरानर
अनुन अनुमुक्त माला ।
'बलमल' मे मलोलिनी ने भी
छन्द व्यग्रा ना रच डाता ।

'गुनगुन' में मतिन्द नित गाने
लगे शार के गीत नये ।
निजनता ने छटे निम्बन
सकरण राग रिहाय नये ।

तारा ने 'मलमल' में मन की
व्यथा अपार सुना डाती ।
शोकानुल हो गड मेदिनी
करके वहा निशा काली ।

निश्वासों धादों में सार
ने भी वाप्यपुन छोडे ।
भोस मनु से नहा रहे ये
नर्न लता तरुन धाडे ।

गिरिप्रेषी निस्तब्ध होगइ
प्रम्नर की प्रतिमा बनकर ।
उसी विपाद-गीत को मेरे
गाते है निर्भर मर भर ।

तू भा गया प्यार भी तग
 सुख-दुख दाना ही बात ।
 किमना लू भजनम्व हाय
 हूँ मेरे उभय पाग्य रात ।

तिपना हुई लताएँ तह से
 उडते हुए त्रितय ।
 नाल गगन में इन्द्र स्तूप क
 प्यारे प्यारे रग ।

आश्रम के बाहर मृगङ्गोत्तों की
 सरस सी दृष्टि ।
 कमल ज्यों से चित्रफला का
 भ्रमर तुम्हारी मृष्टि ।

सम्मुख सब आजाते हैं उस
 गिरि - श्रेणी क साथ ।
 बेणी के पुष्प गुच्छ ओ
 कुशल तुम्हारे हाथ ।

किन्तु न जाने क्या गाते थे
 मीठा मीठा गान ।
 विम्वृत सी, खोयी-सा, मन को
 दुखा रही वह तान ।

आकर्षण

“मूछेना लोक में सहसा
जब गान हो चला निश्चल ।
तब अर्धभाग नौका का
उदरस्थ कर चुमा या जल ।

‘पर दृष्टि भ्रान्त नाविक की
उलझी वी जाकर तटपर ।
वह इबा, लो वह इबा,
वह इय गया हा पटपर ।’

अनुवाक

अनुरोध

सुभे सुनाना हो तो प्रियन्म
गाग्रो ऐसा गान ।
हो जाए अनुभूति जगत का
मेर तन का प्राण ।

आहत के प्रणयन मे
छत्रपटा उठ यह दह ।
रोगी क मन्दन मे छलकल
तरल बह चल स्नेह ।

दुखिया क दुःख में कातर,
मिल जाये जीवन स्रोत ।
निरवलब का अवलबन हो
इन श्वासों का पात ।

वञ्चिता

हर्षित हुई न निशा, उषा का
फैला कब आलोक ।
मलिन प्रदीप लिये लेने हो
तिस पर भी हा शोक ।

दुखिया का सर्वम्ब तुम्हारा
होगा पहला प्रास ।
किसे ज्ञात था उम भररय का
यह निष्कुर उपहास ।

शीघ्र कुटी का तम भनन्त यह
होगा कैसे दूर ?
कैसे बन्द द्वार का मुक्तको
पता चलेगा दूर ?

खोन सकूगी कैसे अक्षत
मे निबल निष्माय ।
क्या पूजा के पत्रपुष्प भी
पडे रहेंगे हाय ।

परदा

नहीं मिला एकान्त कभी ,
दिन दिन गिनत बरों बीतीं ।
गध्या क उपरान्त भ्रमेग,
बीत गई राते गती ।

उम अनीत क क्षण क्षण में
आशा क क्षण क्षण अन्त हुआ
मन की सभी उमगा का
मन में ही काथ समस्त हुआ ।

घूँघट का अन्तर दोनों को
अन्त समय तक राप बना ।
प्रेम प्रसून खिला कोन में
वहीं हागया वह सपना ।

वह द्वार

कहा था, सध्या के उपरान्त
मिलेंगे कुव-भवन क तीर ।
कलित कलियो मे गूथा हार,
ममुर प्राणा से हुई अहार ।

न आये किन्तु निद्रु व हाय !
रहा सूटी पर लटका हार ।
हँस पडी कलिया मुग्गो दग
दन्द कर चली गई म द्वार ।

रहस्यवादी

घड़ियों में युग का परिवर्तन
घट में सागर का भरना ।
शुष्क कठोर शैलखण्डों का
बह चलना होकर भरना ।

चिर असीमता का सीमा के
साधे में आ टल जाना
जग अनित्यता का सुन्दर
शाश्वत स्वरूप रस इच्छाना ।

रेखा लीन बिन्दु में होना
किरणों का शशि को पीना ।
तद्धित हास्य पर, असख्यता का,
एक इकाई के जीना ।

आजाना विराट् का कर में,
सुमन स्वर्ग का बन जाना ।
सीपी का मोती में अपने
रूपरेख गुण को पाना ।

अणु में अखिल विश्व का बसना
 स्वर्णा का हिम जम जाना ।
 उस रहस्यमय का कण-कण में
 हँसना और मिहर जाता ।

मन की आशों से लगता है
 मुक्त हृदय-वातायन कर ।
 जग में, अनिल अनल अनर में
 त्रिपम तान में समतारवर ।

वह है कौन—मनापा, कवि
 तजक, बुध, चित्रकार, शिल्पी,
 हेमपात्र में टालढाल कर
 अनुभन मुरा रहा जो पी २

वंचिता मा से

अपि ! मा क्या होगया तुम्हार
कोमल शिषु को भ्रान ?
विद्वानय से अधरों का क्याकर
लुटा हुआ-सा साज ?

किसन म्लान गींच दी रेखा
उमके अरुण कपोलों पर ?
किमने मुत्र लगादी है मा
उतके तुतने बोलों पर ?

कौन छान लेगया अचानक
हारय विभव अनमोल ?
किमने तरल तोचनों की बह
हर ती छवि मधु लोल ?

रेशम से केशों का गुच्छा
क्यों सोया निस्पन्द ?
मृदु सुमग्न लूटने को क्या
डालेगा न कमन्द ?

नीहारिका

बपल उगलिया नहीं करेगी
क्या फिर मानलाप ?
अस्फुट कलिया बिरर जायगी
हा यों हा चुपचाप !

धूल धूसरित हो न करेगा
क्या फिर गोद पवित्र ?
मूँ करों न मिटा दिया हा !
स्नेह लोत्र का चित्र ।

या मुद्राग की कल्पलता का
पारिजात अभिराम
स्वत चाहता या विक्राम से
पूँ अटल विश्राम ।

या पवित्रतम स्नेह मुधा का
मन में समझ अपात्र ।
स्तब्ध निगा में ताँड चला बह !
जग मे बंधन मान ।

अपि मा, मुझे बनामोगी क्या
इस रत्नस्य का हाल ?
क्यों मुरभाया पडा हुआ है
रम्य पूल सा लाल ?

स्मृति

आगे आँवों में द्विपक्ष
क्या जान क्या रोती है ?
मथकर क्या हृदय सगंध ,
दरमा दता मारती है ।

निभ्र क रास्यग स्वर में
मिल जान की आवुस्ता ।
कुनों क मौन निलय में
लय हाने की व्याकुलता ।

हैमत सुमनों मे गुननी
गिनी विदादित मन की ।
सुसुरित उपरन मे गुनी
न रतना शून्य विगन की ।

ताराचलियों की जगमग
माहार शोक से द्या ।
धौसुरी-स्नात सुदस्ता
क्यों जाती है उरभार ।

नीहारिण

स्वप्ना से अथ न सिहातीं
ये मीन-मृगा की उपमा ।
स्मृति में विस्मृत हा बैठीं,
अपलक प्रस्थापित प्रतिमा ।

चित्रांकण

तन कौन भाव में मन
कीर्ती थी वर रखा ।
नन मधुर कल्पना का निम
दिव्यगति न तगा ?

निम गडुन्तला का रचना में
रचिर तुलिना मेरा
चली जा रहा था निभार निम
स्फुराजि की प्रेरा ?

किस अमर चित्र क अकन का
नसमय प्रयान था मेरा ?
क्यों मिटा दिया रे, बतना क्या
आता जाना था तेरा ।

दुहिता के शोक में

मेने कहा सुना पर तुमन
किम त्रि भर प्राण ।
मन्द ग्पन्ति त्रीपक का जय
हाता मा निराण ।

अम प्राचीर तिनिर का उटकर
मृग हु' सर ओर ।
नभ म पृथ्वी तर दिगन्त में
निसका ओर न छार ।

स्य्य अग्य हागय मार
नग त्रिरण तर एर ।
मग तागने रहने दो धह
नित्य अर्पनी टक ।

अन्धकार मे माने दो
मरी वन्ची का मौन ।
चिर निद्रा क पास स्नेह का
कने मृत्य हा कौन ?

जन्म लिया पर पा न सक,
 भ्राजन्म पिना का प्यार ।
 वचित शिशु के लिए तुम्हारा
 यह निःफल उपहार ।

नीसे होठो पर रखते भर
 सजल स्नेह की छाप ।
 जीवन में क्यों द्विषा लिया था
 मधुर भाव चुसचाप ।

सदा समीत रही जो लखकर,
 बस तुम्हारी दृष्टि ।
 भ्रष्टदृष्टि भर कर न सकगी
 मियतम, ठनरी श्रुष्टि ।

विरह मुक्त कर्तव्य बना है
 सिखा रहा है साख ।
 द्वार द्वार पर फिर मागती
 किन्व प्रेम का भाख । -1

पदार्पण

कितने पाटाम्बर डाले थे
गलियों में नित स्वागत को ।
रही प्रतीचारत निशि-बासर
मनचीते अम्यागत को ।

पारिजात की चन्दनवारों
बुमुम-वरो मे ले-ले कर ।
गर्भित मन से सज्जित की थीं
मणि निर्मित गृह द्वारों पर ।

मोती की लदियों के बदने
तारों की अनुभम माला ।
चन्द्रकला के रुचिर सुन में
गूथ सनाइ थी शाला ।

पाशुल पदपत्रों से पावन
होगा दम्पयितास नहीं ।
जीवनपन जाजीवन होंगे
यद् भी था विश्वास नहीं ।

पल पल करते वासर बीते,
 वासर बीते, युग बीते ,
 नलिन नेत्र पर सतत हमारे
 रह अश्रुजल ही पीत ।

उष्ण वाप्य से रिनग्ध हुआ
 कुछ गर्वभाव यौवन धन का ।
 तव अपाग में लज्जित हान
 लगा रूप चन्द्रानन का ।

ना पथ से आते जाते थे
 व अबाध मकर गति से ।
 कम्पना के सुचितम मन्दिर में
 प्रियतम शोभन रत्नपति से ।

सन्देश

मारा के भ्रम गिगर पर
नापक यह कौन जलाता ?
दूदी वीणा की लहर
पवन स्वर कौन बजाता ?

उन्नी शोभा में किनने
लाकर यह धुमन खिलाया ?
निसके विक्षिप्त हृदय में
यह भाव विपर्यय आया ?

रुल था जो मन न रहा हू
कह दे यह कोई जाकर ,
सुग्वा हू तरस तरस कर
होगा क्या रस बरसानर ?

सौंदर्य

बहना है मोदर्य-सुधा उम
राजमाग क तटर ।
जहा खटी भिदा का दुगिया
अचत मलिन वपनर ।

रूप कुरूप दुआ जाता है
उस शोभा क भागे ।
जहा अन्विचन क धन रा गिशु
सात सोते जागे ।

सुन्दरता की सीमा क्या
उल्लखित उस थल है ।
धमित कृपक क दृश शरार ने
जरा बरसता जल है ।

है अभिराम अनृत का भग्ना
उम अछूत क घर में ।
छूनर जिसे अभावत पावन
होते है क्षण भर में ।

नीटारिका

बरस रही अविश्राम माहनी
उस छाया क नीचे ।
पतिता के अनुताप कथा न
जहा कमल दल गाव ।

हे अनुपम व विश्वविमोहन
उन्मत्तो की टोली ।
मातृभूमि का चूम रहीं जो
हैंम हैंग खाकर गाला ।

हे शोभा ना सार दलन्ता
उस नीरर निर्जन में ।
जहा धूल में सुमन मिल गया
रखकर मन की मन में ।

उपेक्षित का प्रयास

इतनी ऊँची उगे गगन में
मेरे मन की आह ।
झायापन प्रज्वलित हो उठ
मिल न उनको राह ।

विस्मृत की मुधि मात्र कराना
भर हा अपना लक्ष ।
फिर उनका डब्छा वे निमना
रखें नयन समक्ष ।

हमें बहुत है विरह वेदना
यदि वह उनका भावे !
शल्य सेज भी बिद्धा सके
ता मुचमय निद्रा भावे !

यदि

यदि दो पत्र दिये हाते
उठ माने की चरणा क पास ।
हा जाता मन्व्व हमार
हृदय-कुसुम का सपल प्रयाम ।

हँसती हुई पखुरिया होती
भरता होता मृदु मकरन्द !
अर्पित होजाता चरणों में
पुष्पित जीवन का आनन्द !

उनका व्यवहार

भेने दुग्न की वात कही थी
मरि, इतने दिन बाद ,
तो भी उनका मन न पमीजा
वे कैमे मनुषाद !

कहीं हृदय भी है या उनकी
आगे ही है काया !
रूप मात्र देखते हाय है
भाव न उनरो भाया !

भाव देरा लते, फिर मुक्तो
लुकरा दते आली !
रूप विगना का मन मेरा
मेरी कौन कुचाली ?

मुग्धा से

प्रेम मजिर में खला रानी,
सर्व मुहात गल ।
इम विभद्र में मुग कहा हे
जीवन का रस मेल ।

भरला, भरला पात्र पूर्ण ने
रम हा सरग समाल ।
रीत घट से कहा बुझगी
तृण का रस जाल २

द्विन्न-तार वीणा से बैम
फूटेंग मृदु धोल ।
मुन्दर मिलन जणों में भद्र !
मधुरस तो लो धोल ।

पदार्पणवेला

आसू का लक्षियो का हो सुदु
एक द्वार पन्नामे का
गताप और उछरासों की
छाया ही तपन मिटाने का ।

ताजा हा रक्त क्षिप्रकन को
घर में, आगन में, राहा में
मा बहनों की हा व्यथा मित्र
द्विचरी निसरामय आहों में ।

पृथ्वी हा सुगनों मे मटित
गदित हा गद गद आशा ।
पाव से मुग मे कडती हो
रु रदरु रुदामयी भाषा ।

कप्ला का चार हाव में ल
दु गगन अन्धाचारा के ।
भरते हों बुन्दिया, भजन, सुन्न
अनिरत विनाप म नाग के ।

बिदनी सशोभा सीता की
 बीतें रातें अगोखवन में ।
 दुःख की हा काली घटा धिरी
 मन में, प्राणों में, जीवन में ।

लक्ष्मण से भाई मूर्छित हों
 सुना हो सन घर-द्वार मुझे ।
 क्या उगा समय तुम आताओ
 लेने को दुःख से पार हमें ।

हम-तुम दोनो हा राते हो
 रोता हो टख ममार हमें ।
 पग उठता एक बाद में हो
 मिलता हो पहले प्यार हमें ।

हसद्वृत बनर आया ह
 अपना हृदय सभाला ता ।
 प्रेक्षित किया प्रिया ने मञ्जुल
 प्रेम निवन्धन पा ली ता ।

अपने मन की भी कह डाला
 अन्तर आन दिया ला ता ।
 सुग का दुख में पाल चुक हा
 दुग मुदा में नहला लो ता ।

प्रस्तुत विनया पार्थ लक्ष्य
 भेदनर नभ में दगो ता ।
 गौर्य आर साहय का सुन्दर
 मूर्ति एक अवस्था तो ।

श्रीहत विरस विरोधी दन ना
 उधर मलिन मन पया ता ।
 भाव नदी कृष्णा क मुख पर
 इधर उमडता दगा तो ।

सस्ति, वे कृष्ण और वे बातें
 उनको आन विचारा ता ।
 हर हर कुणों, फिर जमुना
 जल को चल प्रिकारा ता ।

कविता का मंदिर

गापमुक्त होगया यत्त अब
भय न ले जाते चरस ।
यद्यपि अलङ्का का वैमा ही
बना हुआ है रम्य पदेश ।

बद्धता बेनबती वैसी ही
हराभग है मग पनास
उज्जयिनी व प्रासाद ना बर
लीला पर हुई रामास ।

मनु मालिनी तट अरण्य में
पिता वयस के आश्रम पास ।
कहा मायवी लता ? कहीं वर
भृगुश्रीनों का सरल विनास ?

अपिरन्या शकुन्तला का वद
अभिनय अब हो चुका व्यतीत ।
फिर दुष्यन्त भूप का भक्ति
होगा वद न प्रणय-सगीत ।

दमयन्ता क उस विलार का
था हो चुका उसी दिन अन्त ।
प्रियतम के चरणों का तिम दिन
मिला अचानक प्रेम अनन्त ॥

वन धनों से, लता गुल्म से,
कौन कहेगा मर का बात ?
व्यथित प्रियतमा की पीडा का
हाल होचुका नल को शान्त ॥

कृष्णा की बेणी को बसन्त
विदा हागया स्वर्ण सुयोग ।
मुक्त कुन्तला करने का अन
फिर न फिरगा वह मयाग ॥

लेकर कृष्ण न अब जायेंगे
फिर स करी सधि प्रस्तार ।
फिर मे पुरुक्षेन में होगा
वहीं मुद्द का आविर्भाव ॥

पंचवटी के शिलाखण्ड पर
गोदावरी नदी के तीर ,
करुणामयी जानरी का पद
धरस चुका संचित दग-नीर ॥

विहगृह्य दग्दमारख्य क
 मुन स्तुपति का मम विलाप ।
 उद्घ्यासों से भूख भूतकर
 व्यक्त कर चुक छ संताप ॥

गमा क चरणों में अर्पित
 मुग्ला रा हो तुम गुमान ।
 कुञ्जकुटा की उत्सुक्ता का
 दाय होगया है वह म्लान ॥

वन चालाण गूँध गूँधकर
 चला चुकीं अपने उपहार ।
 उन सन का सख्य समर्पित
 हे हो चुका महर्षों वार ॥

शिप्रा क उपकूलों पर जा
 मुना गया सफ़रण सगात ।
 मम कौन्ध का वही मुक्वि की
 वाणा में हो चुका प्रणीत ॥

व रसभूत अभी जारी है
 भरना मे भरते दिनरात ।
 गंचित ह उनमें वसुधा का
 विभवरूप नर काय प्रभात ॥

किन्तु बदल कर आज हमारे
 हृदय होगये है विपरीत ।
 विस्मृत सा हागया उन्हें सन
 जीवन का वह रम्य अतात ॥

अरु तमाल के तन क्या मुन
 पडती है कशी की तान ?
 होता कहा प्रनीत हमें अरु
 यमुना का वैसा अकलगान ?

राचहस पर होती है अरु
 नहीं महाभाष्या की सृष्टि ।
 चन्द्रकिरण है वही किन्तु अरु
 करती नहीं मुग की सृष्टि ॥

हे कविता का जेग हमाग
 आज हुआ वह पणकुटार ।
 जही शीण अचल मे माता
 पोंछ चुकी है हग का नीर ॥

है कवित्वमय आज होरही
 निधवा क भासु का धार ।
 पुदता हुआ भाल का सेदुग
 व्यक्त कर रहा वे उद्गार ॥

भावों का ग्रंथन होता है
उग दीना हीना के द्वार ।
प्रतिध्वनि होकर गूँज रही है
जिसकी मौन भनाय पुकार ॥

होकर जो उत्तरग भनल में
हरते हैं दुनिया का शीत ।
सामुच है उन्मूढ काव्य उन
पनों का मर्मर संगीत ॥

उग सहाय्यहीन बचपन में
मैं कविता के भाव अपार ।
जिसकी रचा का पाया है
नील गगन ने यह विस्तार ॥

निसे धूल के स्तनपल्लव पर
देती है वसुधा विश्राम ।
कवितादेवी का पवित्रतम
घना हुआ है वह प्रीधाम ॥

जहा कृषक का आशाधन
भ्रुकुरित हुआ भ्रुकुर के साथ ।
वहीं खेत में बुना रहा है
भावमयी कविता का हाथ ॥

नीहारिका

वृद्धापन है वहाँ जहा
जहर शरार यह धमी महान ।
जीवन दिन क बाद शान्त है
राध्या का पात्र भ्रमगात ॥

जहा दामता क बधन में
बंध हुए हैं कीमल साथ ।
निजपुरा म विभे जा रह
जहा हृदय पथर क साथ ॥

कमला का कर जहा सींचकर
मार्थ छान लता सर्जन ।
दागों का भ्रमित्व जहा पर
मदन करता है राचर ॥

• जहा लोकमन का हाता है
कर लेगना म महार ।
जहा असंग्य निरीह जनो का
होता है अपहरण भहार ॥

वहीं मूरता के अभिनय में
पाकर ममान्तरु साप ।
चन कर गोती घरत रहे है
मजल नयार के काव्य पलाप ॥

आमा कविर ! चने वा ।
 उम दुनिया क लाये सन्श ।
 जहा हण का पडा हुमा हे
 नर नमाल मान मनशेष ॥

निसक जायन का रोव्या मे
 गाधुली का गान्त निवास ।
 पृष्ट मालन करता भविरल
 अन्ति निच सन्क्षण इतिहास ॥



वाञ्छा

निभर घन तर मरा क्या तुम
 मरि जाण कुटी क तीर ।
 बरसा तरो हृदय में मेर
 शरर न्यामल घन के नार ॥

भूला करो कुन में हँस हँस
 बनरर रुचिर प्रसून नरान ।
 मरी विरह-व्यथा रत्नी क
 बना करो तुम शशि भ्रमलान ॥

मे चरार हा जाऊ प्रियतम,
 तुम गा चंद्र निरगुने रा ।
 भ्रमगी बना पिरू उपरन की
 मुमन मुमन रस चरणे की ।

कलिना बनरर चरण प्राप्त का
 रसरू सिर पर पावन धूल ।
 जल शैवालिनि शरर पालू
 प्रणय मरोवर का उपरूल ॥

सुभमें तुम में तुममें प्रभुवर ।
 हा नाये एमान्त तिलीन ।
 अग-जजाल विराग राम में
 रहें नर्भदा मतन तीन ॥

जीवन का अभीनन्दन

एक मन्दनों का एक मपदा
मर पथ में भूत परी हा ।
कर्मों की कुटिया म भेग
लिय प्यार क फूल गदी हो ।

देना हृदय तुम्हारा राना !
अथकार में स्वण विगना ।
तुम बरती हो उसे कि चियता
त्याग चुरा ना विदलित नप सा

बोयो, बाला, प्रिय ! कौन-सा
रम्य प्रलाभन तुमने पाया ?
अपनी आगों मे जीवन म
जा मे अजनक दार न पाया ॥

तुम हा दिव्य दया की दरी
किन्तु अहा क्या काम तुम्हारा ?
जहा न सुख की एक रश्मि न
कभी भूल कर निया पनारा !

अप भी द्वार खुला है प्रमदे ।
 देखो, तुम पीछे फिर जाओ ।
 इस दुग्न्धयुक्त रौरव में
 वम, आगे मत पैर बटाओ ॥

सुम्नता यहीं पडा रहने दो
 भेगी छाया को मत छूना ।
 तुम्हें अपानन होते लखर
 होगा जानन का दुख दूना ॥

किन्तु अरे ! यह क्या तुम तो फिर
 बढी इधर हा को आती हो ।
 क्या जाने क्या प्रेम मुधा को
 कानों में ही बरसाती हो ॥

अजब हे यही तुम्हारा निबन्ध
 तो फिर आओ प्रिये हमारा ।
 हम भी कमर अलिगन में
 भरले कोमल दर तुम्हारा ॥

तन न तन मे, मन का मन मे,
 ऐसा मिलन करा ले रानी ।
 भूले कभी न जानन भर
 दुनिया को अपना मिलन कहानी ॥

जाने कौन, न हा जायेगा
 क्षण भर में सुख स्वप्न हमारा ।
 उगी गलित रौरव का भीषण
 एरु प्रवाह बटेगा सारा ॥

अभी अकला इब रदा हूँ
 निम दुभाग्य मिन्धु में घाले !
 उमने कभी न दख है जीवन
 क ऐमे क्षण मतवाल ॥

उमके लिए प्यार की अभिनव
 दुनिया लेकर तुम आई हा ।
 जीवन के उत्तम मरम्भल
 में तुम सधन घटा छाई हो ॥

युक्ती दीपशिखा को तुमने
 जीवन का वरदान दिया है ।
 निन्द्य जानो मने भी तो
 काइ पुण्य महान किया है ॥

अतुल कृपा का बदला रानी !
 चुका सहेगे जय ये चुवन,
 तव जानूंगा साथ हुआ है
 जीवन का दूतन अभिनन्दन ॥

कुटिया की शोभा

कुटिया की छत्रि में बैसा ३
विरवनिमोहन रूप ।
जटा झिलक कर गाता बालक
माट बाल अनूप ॥

मा हँस कर टर लती उमरा
अचल में सपिनाद ।
गाल चूम कर भगलती फिर
बने प्यार म गाद ॥

मिता छपर पर लहरावा
हरी लता अभिराम ।
सुमन भारत हुए गाचन
सुरभिन्न रश्मि ललाम ॥

ज्यागा जब रगातानत तपन
कगना बहा तिसाम ।
शूर पर तप छाता कगा
आ दा मधु विलास ।

नादाग्नि

मडा त्रिगुल ज्ञाया में हाती
धु भूदर नेन ।
तनिर दूर पर विमुध धूल में
कता बहुमा येन ॥

पीद सडे म्म म मू
घर का लिय हुलास ।
अलसी क तीसे कूर्ता म
भरता रम्य विलास ॥

भाली डाल सरल बालिका
पूर्वों सा भ्रमलान ।
बीन रा बेटा हरियाला
अपनी पुन में लीन ॥

लानर मटर डान दता दे
भारा चाक विमान ।
म्वागत हो बाह्य भावाता
वृपकवधु छविमान ॥

जला वातर ना रोटी पर
रन मरमा ना साग ।
रान का रेंगाय कमा ह ।
अना सरल अनुराग ॥

भ्राजाता दुहिता दलान कर
 माओं की दावार ।
 हो जाता परिवार स्वय तव
 छोटा सा मसार ॥

चकित स्वत अपनी रचना पर
 होता है विधि मौन ।
 बुटिया का रजस्रग बनने में
 है गोरवहत दान ?

विजय का मूल्य

'लाल गया तूणीर तीर
धार्या त गड कटार !
अधतय में हाने वाला ह
गिर पर बज्र प्रहार ॥

यह साचर बना रहा था
छानी सम्मुख वीर ।
विजली सी चमड़ी सना में
गिर सी गड लना ॥

भक्त क्लिप्त भिन्न अवयव
रिपु लाट गया तत्काल ।
पटा गल में ला थोड़ा क
प्रेयसि की भुनमाल ॥

सुख प्रेम, उत्साह, पुनः,
गौरव गरिमा आनन्द ।
वारी वारी चूम रहे थे
दोनों क मुराचन्द ॥

कहा नीर न प्रियमदा मे—

“अग प्राणेश्वरि वात ।
अग इन भुज दगर्ज का दगा
रणशैशल विकराल ॥

“यदि तुम या ही रगे सामन
गच्छिर्मूर्ति अभिराम ।
युद्ध, युद्ध हा युद्ध—न जणभर
का हो कहीं विगम ॥

‘मथ डाले तो शत्रु सैन्य का
दृग यही कटार ।
यनी निपग वन खर तीरो
का अक्षय भंगार ॥

हर हर करक घटा वार धर
प्राणप्रिया का हाथ ।
पर हा उम दुर्द्वेष तुष्ट ने
दिया न उतसा माय ॥

वक्ष प्रिया का एक बाण न
भारर क्रिया विदीण ।
गोदा में वट गिरी हस्ताहन
एक लता सी शौष ॥

पर पल में वह वीर दिग्गड
पडा रूढ़ का रूप ।
शत्रु-सैन्य के लिए भयङ्कर
लगा खारने दूप ॥

क्रिया पराजय शत्रु, जय श्री
भी पाइ अनमोल ।
किन्तु गले में पड न सर्प
वे कभी भुजाएँ गोल ॥

अन्तर्वेदना

पुग्वाइ क साथ कमरु उठता
भतर का घाव सखी ।
मर मर कर जीती हूँ तो भी
होता किन्तु न छाव सखी ॥

दुनिया को बतला दन में
भव क्या रहा दुराव सखी ।
भव जन में रह गई भकली
और हमारा घाव सखी ॥

वह भी दिन था जब तनमन का
लगा दिया था दाव सखी ।
हार जीत में, जात हार में,
थी तन दिल बहलाव सखी ॥

दुनिया थी रगीन, और यह
नभ का नील तनाव सखी ।
ऊपर को उठता जाता था
मन का सुमथुर भाव सखी ॥

नीहारिका

पृथ्वी मुझको स्वग बनी थी
गृह नन्दनवन रूप सखी ।
दुख में मुख का भाव भरा था
वैसा एक अनूप सखी ॥

स्वप्न होगया आज हमारा
हाय ! अमृत का रूप सखी ।
ध्वान्त सिन्धु में डूब चुमी वह
स्वच्छ सुनहली धूप सखी ॥

मिथ्री मन में घोल रही थी
जो कोयल की बूक सखी ।
वही आज बनकर चुभती है
दुखित हृदय की हूक सखी ॥

तुम सोचोगी है वह मेरे
यौवनमद की चूक सखी ।
मैं छुनती हूँ, इस जग का है
केवल यही सलूक सखी ॥

किरण-करों से करता आवर
पहले शशि शृंगार सखी ।
भौं' घनता भवर्तस गने का
फिर तारों का द्वार सखी ॥

धन धनकर सिर पर भरते ह
 प्यार और उपहार सगी ।
 हन्त, मन्त में अंगारों में
 हाता सय पुद्ग चार सगी ॥

जिस दिन अपने आप बन उग्र
 था वाणा से राम सगी ।
 तबिक् छलफ जाने से मदिरा
 ने छोटा था भाग सखी ॥

दिन वसन्त फूला में दया
 था जय स्वत पराम सगी ।
 साँचा था जगने वाला ह
 साया अपना भाग सखी ॥

वही हुआ आए प्राणेश्वर
 लेकर मृदु मनुहार सगी ।
 जगजग पलपल, विहँसविहँसकर
 भेंट हुई गृह द्वार सखी ॥

ललित लान थी बसी हर्षों में
 दिल में प्यार अपार सखी ।
 रत्नप्रभा से जगमग था उस
 दिन अपना संसार सखी ॥

प्रथम मिलन में क्या जादू था
हुए नयन जब चार सखी ।
तो क्षण भर में रही मुग्ध सी
सखी न तनिक सम्झार सखी ॥

तन को, मन को और पाण को
भूली मैं उस चार सखी ।
किन्तु सत्य और सुन्दर सा
था वह नश्वर प्यार सखी ॥

पानी सा बह गया एक दिन
में ही सब भालोक सखी !
उस सरने की मलक कहा
फिर पार कभी विलोक सखी ॥

मुझ कोरी का प्राणसत्ता वह
कहाँ उड़ गया थोक सखी ।
न्वासों के मूल में भूला
फरता है भय शोक सखा ॥

हम दोनों को विलग दिया है,
ह वह सब पापाण सखी ।
अंतर में ह विधा उसीका
सब सुभीता बाण सखी ॥

भाह ! भाज पा जाऊं जो मैं
प्रिय का कहीं कृपाण मगी ।
उभन और पीडा से कर लूं
इन प्राणों का श्राग मगी ॥

परिचय

धवि की निहवा पर सोती हूँ
सरस्वती की छाया बन ।
वारिद म बसती हूँ होकर
चपला का हठ झालिंगन ॥

अधरों में नित हँसती हूँ
मुगकानों में मुगकाती हूँ ।
बुलबुल का मुमथुर तानों में
थिरक थिरक कर गाती हूँ ॥

रम्य वनधा हूँ वसन्त की
अमराड की ज्यामा हूँ ।
निज सवन्ध वार डाला था
मैं ही वद अचवामा हूँ ॥

मुननों में सौरभ सरसाती
सध्या को लार्ती दता ।
प्यार सहित प्रभात को मैं हा
अंचल में लेकर सुता ॥

आगा की मैं भुक्ति विरुद्ध हूँ
 रमी हुई सपक मन में ।
 मैं आनन्द छटि करती हूँ
 दुःख क नीरव निगम में ॥

सुख, सौंदर्य, प्यार-वैभव की
 हूँ मैं परदात्री दबी ।
 गुर किन्नर-नर-नाग भनुर सग
 मेरे ही हैं पदमेरी ॥

जग चरण भक्ति होते है
 बन जाता है नन्दनवन ।
 नूपुर की भक्ति से मेरे
 भ्रमृत है यह विश्वसदन ॥

मेरी इच्छा से लालित है
 जग की सब अभिलाषाए ।
 मुझ से ही जीवन पाती है
 भीमाकार दुराशाएँ ॥

मुझसे ही सम्पदा गगन ने
 पाई है तारोंवाली ।
 स्मिति मेरी ही छाई है
 होकर वसुधा पर हरियाली ॥

भवगुह्य के दो नयनों का
प्यार भरी भाषा हूँ मैं ।
हृदय-स्रोत से मर मर भरती
पगली प्रत्यारा हूँ म ।

मैं हूँ भक्ति भक्त के मन की
रागी क उर की माया ।
ज्ञानी को झालोक-गति हूँ
जगन्निवास की हूँ जाया ॥

पतितपावन

मन्दिर के प्राण में भर्जों
की थी भोज अपार ।
धूप दीप नैवेद्य अर्घ्य थे
पूजा क उपचार ॥

सामगान में गुँन रहा था
पावन पुण्य प्रदर ।
रजत किरण से नहा रहा था
वह सारा हृद्देश ॥

स्वर्णपात्र की दीपशिखा का
मन्द मलिन था वेश ।
किन्तु न लव पाता था कोई
उमके मन का क्लेश ॥

मूक विरावहीन मलमल में
उसका मर्मोद्ध्वस्त ।
ईगित का भनवत कर रहा
था नित व्यथ प्रयास ॥

नीहारिका

हाय दृष्टि विभ्रम में सारा
हुआ पुजापा नष्ट ।
उन्मत्त, अन्ध, भादर का
व्यथ हांगया फट ॥

सिंहासन पर ये न वहाँ
सर्गतिरूप सौँस ।
शीथ कुटी में उन्हें होगया
था अद्भुत का पहेला ॥

शतध्वनि में बसते हैं क्या
दीनबन्धु भगव न ?
तरम रहे हों प्राण के लिए
जब गरीब के प्राण ॥

क्षमा याचना

मान का अनुरोध हुआ पर
हृदय वहाँ से साक वह ?
ठण्डे टपका में फिर से मैं
देमो कली तिलाऊँ वर ॥

स्तन निशा है दिन सुना
जीवन का खाली प्याली है ।
घोड़ों तक राध्या के अचल
की हुँधली सी लाली है ॥

शीर्ष फुली के पाहर वसुधा
में लड़गता है अन्दन ।
व्यक्ति आँसुओं से भरता है
परत देता पर सदन-सदा ॥

पर लो अन्द भरते से ।
मेरे गायन के गेगी आन
देवन समस्त पर बनता है
अस्त-शरत होरहा धन ॥

आभार

प्रेम रुचिर हं मेरा बाले ।
रूप रुचिर है तेरा ।
हृदय रुचिर है उसना जो
है तेरा चाह चितेरा ॥

वाणी उसकी रुचिर प्रिये है
जिसने लकर गाया ।
मेरा प्रणय-गीत सुन जिसने
तेरा जी भर आया ॥

उम छवि के कृतज्ञ हैं दोनों
म तुम मरी रागी ।
जिसकी वाणी ने प्रमत्त की
अपनी मिलन-बहानी ॥

जीवन का सार

हिलमिल सेलें धूप छाह में
जीवन के दो दिन है ।
जल अबर के मध्य धूमन
श्वासों क फल दिन है ॥

कर लें, धर लें, विहर सिहर लें,
फूलों से घर भर लें ।
फिर स्म-वास कहा होगी
ये घडिया मसय करलें ।

यह मध्यान्ह मिलन जीवन में
अनुभूत पुण्यस्थल है ।
हृदय हृदय की भेंट कराले,
श्ममें कितना बल है ।

संसार

कौसी है य सध्या देवी
सस्मिता उपा जिनकी भ्रुगुत ।
वैसा जीवन की विषम पढी ।
हे मृत्यु पूतना जिसमें रत ।

वैपथ्य हलाहल पान किये
ये सूर्य चन्द्र से रथी यहा ।
दिन रपनी का मेला देखो
छाया से गुंथी ररिम जहँ ।

दुख पर मुख का परिधान तना
सुख क तन पर दुख की रेखा ।
इस इन्द्रधनुष की रचना में
जग का यौवन मिलते दगा ।

प्रश्न

तुम किसे याद घर
नयन-पात्र भरती हो ।
यह अनुभव प्रथि
सुमुक्ति किसे उरती हो ?

तुम लुटा रही हो
हार मोतियों क जो,
सा निधि है ऐसी
कौन किसे बरती हो ?

तुम लिये चित्र हो
विशका उर अन्तर में ?
तुम सदा मौन मन
किसे प्यार करती हो ?

अनुभव अनन्यता किसे
समर्पित बाले ।
जीवन का भी जो
मोल नहीं घरती हा ।

सृष्टि और सृष्टा

द्विज प्रकृति पुष्ट ने रसा जगत
इतना रुचिर, इतना मधुमय ।
विष्णुयज्ञ नभ, अणुत गिरिवर,
विस्तृत वसुधा, अमिराम प्रलय ॥

फलकन सारिता, भरभर निर्भर,
भलमल मजुल ताक दुकूल ।
शक्ति रजत रूज, जालामय रवि,
सागर अकूल, सुव मूल फूल ॥

सैव्या वसा, शुचितम ऊसा,
सुसदुसमय यद जीवन प्रनाद ।
बहता बहता जा रहा पहा,
इसक तल की है गही पाह ।

इम सादि जगत का भादि कोन ?
इस सान्त विरद का अन्त कदा ?
द्विसकी माया से निर्मित यह ?
द्विसकी इच्छा का भात यहा ?

यह सूत्र कौन जो प्रथित किये
 ये मणिमुक्ता से विविध रूप ?
 भावी के प्रागण में सबकी
 है बाट जोहता कौन कूप ?

यह चिर-रहस्य, यह नित्य सत्य,
 यह एक रूप, यह धूप-झाह ।
 यह अस्तित्व अस्तित्वपूण
 रक्षक है इसकी फौन बाह ?

मानस में इसके राग रुचिर
 इसका कर्तव्य विराग विपम ।
 अन्तस इसका रस-रास-रचित
 इसका वपु केवल ज्योतिर तम ॥

किससे पृष्ठें, वह सुकवि वहां
 कर सके निरूपण रूप रम्य ।
 उस अमृतपुत्र का, प्राण फूँककर
 धन्य हुआ जो जग प्रणम्य ।

आत्मचर्चा

एक गीत गाया था मैंने
राग तुम्हीं थी मेरी ।
एक स्वप्न देखा था मैंने
जिसकी तुम्हीं चितेरी ॥

रुचिर कल्पना बन जीवन में
मेरे तुम भाई बाले !
मेंहदी सी रच गई हमारे
भार्लिंगन में रस ढाले ॥

तुम मेरी भाराभ्य, तुम्हारे
रस विष का मैं भाराधक ।
फूट न जायें छाले उर के
छलक न पाये प्रेम-चपक ॥

मोह

कितना है मोह बताऊँ,
इस जीवन से प्राणेश्वर !
घड़ियों में जिसकी तुमने
बरसाया था रस निम्न ॥

होकर प्रसून लाये थे
जिसमें वसन्त-श्री प्यारी ।
वन मद्धर मधुर जीवन की
भर दी थी क्यारी-क्यारी ॥

कैसे मैं उसे विसाहूँ ?
कैसे मैं उसे भुलाऊँ ?
उस स्मृति-तट से मैं कैसे
जर्जर यह तरी हटाऊँ ?

नश्वरता

चिर निद्रा है, गहन निशा है,
है तम का अधिवस ।
उठता जाता है पल पल पर
प्राणों का विश्वास ॥

धर होगा प्रभात, जीवन
फूटेगा आलो
नदरफूर्ति से स्पन्दित हं
मेर मन का शो

मिटा रही है धरा चिन्द सन
दकर अपनी भक्त ।
जला, जला द बधक धधरकर
चिन्ता अभीत अशक्त ॥

कौन लिखरहा है ब्राह्म से
 यह सक्ल्य इतिहास ?
 उसे चुनौती देकर बहता है
 यह पवन सहास ॥

धीरे बोलो—यह निसर्ग है
 माया का षडयन्त्र ।
 प्रतिफल जहा ध्वनित हाता है
 नाशक मारण मन्त्र ॥

कौन रहेगा, कौन घसेगा,
 कौन हँसेगा, हाय !
 रुदन ?—नहीं, वह तो बेचारा
 है निरीह निरुपाय ॥

साक्षी

मीठी मीठी पीटा मन की,
भ्रात्यों का यह रग सुरग ।
अलस पलक की कहीं हमारी
निद्रा के भ्रोकों का ढग ॥

समझ न लें वे मतवालापन
साक्षी रहना ते प्याली ।
चुपके कानों में कह देना—
“भवतरु सदा रही खाली ॥”

महक न मदिरा भाज उतरजा
भाते होंगे बनमाली ।
देख, तुझे ही कहना होगा
“भव तक कभी नहीं ढाली ॥”

वर्जन

दुरसुई हूँ मैं सुकुमारी
घानपान से मेरे भग ।
रस लेने का उधर तुम्हारा
मधुप बावरे बढ़त ढग ॥

इम असीम अन्तर में कमे
होगा जीवन का निवाह ?
असमय में ही जला रही है
सुकुको अन्तरतम की दाह ॥

कष्टक सी कैमी लीला यह
फूलों के सहचर सुकुमार ।
प्रेमप्रदरान कौन कहेगा ?
निष्कुर, यह तो प्रेम प्रहार ॥

मिलन-निशा

मिलन निशा है आज, आज सखि,
भावों का मेला है ।
कुसुम कल्पनाओं को, मन का
धूल लेता रेला है ।

पल पल, दिन दिन गिन गिन भाइ
चिर वादित वेला है ।
आज हृदय है और, और ही
जीवन की खेला है ।

मिलन निशा है आज, आज सखि
भावों का मेला है ।

कानपुर के प्रति

पुण्यभूमि के राक्षस,
भारत क दुर्भाग्य ललाम ।
शान्ति-कुञ्ज जान्हनी कूल पर
ते अशान्ति के धाम !

छल प्रवचना के वशिष्ठ,
ए विदुशियों क भाव !
पावन आर्यभूमि भारत क
वक्षस्थल के घाव !

ए दीर्ना के भक्षक,
पापों की प्रतिमा दुर्दान्त ।
अत्याचार निपीडित जन के
ए पीठक उद्भ्रान्त !

ऐ निरीह शोणित से
कम्बेवाले निज अंगार ।
ए विधास विधातक
तुम्हा वारवार धिक्कार !

न है कलमों की इति
 तेरे, ते कलंक के रूप ।
 अपने ही रक्त के भक्षक
 ते विभीषिका रूप ।

किन शब्दों में बिस्कारैं
 किम वाणी से दूँ शाप ।
 दरस पडे समस्त नरनों का
 तुम पर ही अभिगाप ।

जिन्तु अपम कृत्यों का
 तो भी होगा क्या प्रतिशोध ?
 नहीं, जलाया करे तुम्ही को
 तेरा दुष्ट विरोध ॥

अन्तर की आग

संस्कृति की बीणा में बजते
हैं दिपाद के धोल ।
लाजवती क्यों गोप रही है
भवगुण्डन तो खोल ॥

रोम रोम क भालिंगन में
सिहर उठे ये प्राण ।
ब्यया चुभ रही भाह! हृदय में
होकर खरतर बाण ॥

कौन भाग जो जला रही है
रेराम का ससार ।
क्या जानोगी लिये हुए जो
हो अधरों में प्यार ॥

जलाश्रावन

ठरी छवि में म्नान किया
इन आखों ने जब से री ।
त्व से हासे वह गई यहा
द्वितीय कृष्ण-कावेरी ॥

जीवन-जग हूब गया मेरा
धुल गया हास्य भ्रमों से ।
क्या प्राप्त कहीं होगा फिर भी
जो खोया इन्हीं करों से ?

दर्शन दुर्लभ होगये प्रिये
ऐसा क्या था अपराध हुआ ?
जो कली फूट कर कुमुम हुई
तो क्या मलियों का भाग हुआ ?

विपन्नावस्था के उद्गार

सोया था आनन्द-सदन में
जागा तो यह रक्त विपन ।
हाय, नियति की रेखाओं का
भ्रक होगया प्रमुदित मन ॥

कैमा तो यह नील गान ॐ
कैमी है शालीन धरा ?
अतल अकूल जलधि है कैमा
निर्मम धीचि विलास भरा ॥

अभ्रकला हिमाद्रिश्रेणी है
कैसी हृदय विहीना मी ?
उतर रही है कल कनालिनी
कैमी निज सुख लीना सी ?

आख भूँदते हाय पोंछ दो
सबने अनुपम गिन्पकना ।
दो घड़ियों में शोक हमारा
सोने का ससार चला !

नीहारिका

किरणमयी ऐ । मुझे बता दे ,
उम झुथियाला का वह पथ
गई जिधर से उधर ल चलूँ
ता मनोरथो का यह रथ ।

जुल जाने दे, खुल जाये दे,
जीवन की समीप गली ।
स्वर्ग द्वार पर, पथरजकण पर
होने दे भवतीर्ण अली ।

चग्ग चिन्ह सोपान पार कर
माँही मिले, सुहाग मिल ।
इम साधना सिक्त मंदिर में
जग को वह अनुराग मिले

तिसकी पूजा कर पाया था
सावित्री न प्रियतम वन !
यह छलमय ससार बना है
तिसके कारण नन्दनवन ।

दीपनिर्वाण

जीवन मरुस्थल में

हिमकण बिन्दु-सा

हाय ! वह अचानक अयाचित ही आगया भा,

स्वर्ग सुख लेकर ,

धसन्त पुण-सा मृदुल

कोमल, ललाम, अभिराम शिशु भाग्यवान् !

सरस हुआ था रसहीन जग ,

क्षय क्षय , विष्व की छडोरता

हों , कर्मरत जीवन भा

जीविका के दूद सब

सहनीय हो गये ये ,

दुष्टप्रह सा गये ये

रात्रि के निविड सम

शून्य यह पीच दीप्तिमान हुआ देखकर

उज्ज्वल आलोकपुंज दीप अनुपम एक ।

नीड कर धम गये
 आनर अचानक धे
 कितने ?—अमख्य स्वर्ण-स्वप्न रम्य,
 भूलकर मार्ग सब
 उन्नत चरोनियों धे ,
 मुग्ध मनोमदिर में
 मेरा चिर-सगिती के ।
 रात्रियाँ वे कैसी थीं मुहावनी मुधाशुभयी ।
 छुटा छुल किरणों में
 बरस रही धां मुधा
 भोमकण मूँघते धे मोती चुन चुन कर
 बेसी में निरा की गुप्तुत नर प्रेमालाप !

गान में विहगम के
 आते धे प्रभात नव ,
 पुष्पगशि -राजित
 सलोने से, मलोहर से ।
 आरा के रंगीले पत्र
 नील नभोमडल में
 विस्तृत भुवन छोड़
 रजित क्षितिज पार

विहग समूह साथ हाते ये प्रभावित क्यों ?
 गुदगुरी थी यह ?
 उन्माद था ?
 विलास था ?
 जीवन का रस था गधुर ?
 भव्य कल्पना का स्पष्टिक निर्मित विशाल-सा भवन था ?

भक्ति शून्य ,
 रिक्त दाय ,
 मन्द भाग्य ,
 शुभ्र उत्सर्ग-भावना विहीन ,
 माम के भिरसारी को
 अपूर्ण भाग्य भूपित
 किया था किस भूल ने
 उस विरचेखर की ,
 शत किसे ? देव हा।

अक्षत- नैवेद्य नहीं ,
 अव्य-धूप-दाप नहीं ,
 थाली में पुजापा नहीं ,
 अजलि में पुष्प नहीं ,
 ध्यान नहीं ,

नीहारिका

धारणा , समाधि , तपभाव नहीं,
मन नहीं,
मेम नहीं ,
रिक्त-शून्य दलित बलिता विश्वधन
विरम तिक्त जीवन में ,
दय करदान तुल्य ,
पावन परम पुण्य ,
ललित विलास रम्य
मेरे देव ! पाया था सिलौना यह
किम स्वर्ण-योग में ?
किम सत्कृत्य का
उपहार या वर , हाय !

भोले भोले तोतले सगोले मुच के धम्म ,
स्मित फुहार से ,
सम्द्रपेन स घपल ,
सौर से सत्त शुध्र ,
रत्नराशि से अमूल्य,
सुट गये, बिखर बिखर कर मिट गये
अनभिज्ञता में सब एक साथ ,
मूल्य कुछ भी तो नहीं उनका लगा मका में ।

चिन्ह नहीं भवरोप,
 एक भी रहा है हाय !
 दिग्गपट धुल गया,
 रान से भ्रष्ट ने,
 भावृनि-प्रकृति सय
 दिग्मृत विलुप्त-प्राय
 वरके प्रहार किया कापवज्र, दन्त हा !

नारी

चिरवदिनि का आज निरोपण
तुमरो दातर करता नारा !
अपने चिरसगी मानव के
प्रति दोनों झू वक तुम्हारी !

आरोपा क पृथुल हिमाञ्चल
य नीचे तुम उमे चुचलती ।
सास-ताम म रही युगो से
जिममें आग तुम्हारा जलती ।

तुम प्रतिहिमा लीन आज
विद्रोह रचाये राम रोम में ।
तुम रदा भैरवि कराल वन
हा ताण्डवरत विश्व ध्योम में ,

अरने चारों ओर दरतीं तुम
फारा धवन भावप्टन ।
सशाय के विष से निषाक्त है
आज तुम्हारे दोनों लोचन ।

पृथिन स्वाय की गध कहीं से
 तुमने नदनवन में पाइ ?
 दुश्चिन्ताओं की चिनगारी
 मन में किसने भाज जगाई ?

तुम मिथ्या भय में भीता न
 गृह स्वामिनि सश्वरि, मानों ।
 जीवनसहचरि ! व्यथ यह क
 गृहजीवन पर तीर न तातों ।

याद करो घट गत भ्रतात, य
 शैल-कन्दरा, वे निर्जन वन ।
 फिर याद करो वह हिंस्र सृष्टि
 वह कुशा शैया, वे अजिन वसन ।

हिम आतप वषा के वे दिन
 वह भू-कर्षण उटज प्रसारन ।
 याद करो वह अधकार युग
 वह नैसर्गिक काय विभाजन ।

याद करो जब पण्डुटी में
 स्वच्छा में रहना चाहा था ।
 याद करो जब व्याधूर्धर्म क
 लिए हमें तुमने धाहा था ।

नीहारिका

सदियों पर सदियों , युग पर युग ,
याद फरो तो किस बीते ?
इसी तुम्हारा मानव ने क्या नहा
तुम्हारे हित रख जाते ?

बह तिरिन्ध, निभकुश प्राणी
बधनप्रस्त हुआ क्यों दबी ?
क्यों जंजाल लपटा उसने
जा स्वदेशता का चिर सेवी ?

प्रथम मिलन के उस मधु क्षण से
क्या बह नहीं तुम्हारा सवक ?
चिरविरवामी दबि ! प्राच ही
तुमरो कैसे हुआ प्रवचक

क्या चिरजीवन का मधु मचय
उमन भ्रमन लिए किया है ?
क्या चरणों में नहीं तुम्हारे
उमन कण कण हाम दिया है ?

नडे किये क्या नहीं तुम्हारा
लिए ताच है उतान रानी !
स्वर्णमूर्ति गदकर क्या उतान
नहीं तुम्हारी महिमा मानी ?

अथशुद्ध में रहकर भी कर
रती हृदय-भदिर के बाहर ?
स्वर्ग-मेरुला में विनगित भा
तुम स्वच्छ-दचारिणी भूपर ।

घर-घर में तुम नूतन होकर
रागन का सून हिलाती ।
मानव के तौभाग्य तम लिपनी,
लिखकर फिर स्वयं गिटाती ।

महिमा क जो स्वयं गलरा ले
रती सभ्यता का दावारें ।
वे नर नारी क कृति व की
है सुन्दरतर हड मीनारें ।

हम दोनों की सहचरता में
जन्मा है सब शिल्प-कलाए ।
सुदमहन सभी कृतिर्या में
उभरी हाथों की रेखाए ।

तुम अर्धोग पुरुष का देवा,
तुम अर्धोग शृष्टि का नारी ।
मानव तरु ही कव सीमित है
यह विस्तृत भूमडल नारी ?

अपने से याद भी नारी का
 तुमने क्या रूप निहारा ?
 नर क बिना कहाँ नारी न
 जीवन का विस्तार पतारा ?

वन्दनीय मातृत्व साथ में
 तुम अपने लेकर आई हो ।
 त्याग, तपस्या करुणा संयम
 का मृदु छवि लपेट लाई हा ।

चिरकृतज्ञ नर है नारा का,
 चिरकृतज्ञ नारी है नर की ।
 एक हाथ की नहीं सृष्टि है
 यह जीवन के अभ्यन्तर की ।

यदि तुमरो है यही इष्ट
 हम तुम दोनों लें और और पथ ।
 साथ साथ रह चुके बहुत भ्रम
 चलें विरुद्ध दिशाओं को रथ ।

प्रतिद्विदिनी बनो तुम नर की,
 अधिकारों को तुम अपनाओ ।
 उलट पुलट कर दो जीवन को
 एक नया संसार बसाओ ।

नरनारी में होद मची हो
जावन व्यापी हो सघर्य ।
चलो, तुम्हारी इच्छा में है
मानव का सहयोग सह्य ।

प्रेम या अभिशाप

उन घटियों को भाग लगे जब
हुआ भवानरु दर्शन तेरा
सोने का मसार मित्र गया
री, तब से मिनी में मेरा ।

स्वप्नों की वासन्ती छाया
ज्वार उठाती भाई मन में,
रहँ गई, व मादर रातें
भर लाई थीं मधु चुवन में ।

फूलों, पत्तों, ड्रुम, कलरिया
में फूल थे भाव हृदय के,
निर्भर के कलकल में गायन
थ जीवन की सुमधुर लय के ।

ऊया स्वर्ण लुटाती भाती
सध्या जानी राम रचाय ।
ऐसी थी एकदनी दुनियाँ
जिसमें यौवन के दिन भाय ।

विधि ने तो वरदान मान कर
 तुम्हें सहेजा था हे बाले !
 किन्तु पड गये उसी समय स
 यहाँ भ्रवानक दिल में छाल ।

भाग लगाने लगी चाँदनी ,
 सौरभ जी में शल चुमाने ।
 चन्द्र-करो को बॉट दिय है
 तुमने तीखे नर मनमाने ।

इन्द्रधनुष का चीर भ्रोड कर
 तुमने हृदय चीर डाला है ।
 मुझसे भाज पूछती हा वह
 कहा प्रेम की धरमाला है ?

धुरधुर होगया हृदय जब
 तारतार हो बिखरी आशा ।
 मृगमरीचिका-सी तब फिर फिर ,
 बडा रही हो प्रेम पिपासा ।

सोमल तन में पत्यर-सा मन
 केसा विषम विरोध तुम्हारा ?
 रह तडपता आहत मानस
 गिर न एक भ्रशु भी सारा ।

भारत गीत

नदियों का हृदय हमारा
यहीं हसते होते हैं ।
यहीं ओढ़कर हिम की चादर
शैल शिखर सोते हैं ।

किरणों का त्रिरीट माथे पर
यहीं श्रुत धरते हैं ।
पुष्पाणि से लता उजस्र
यहीं गोद भरते हैं ।

भरनों के धारा प्रपात में
करती स्नान शिलाएँ ।
यहीं बैठे दाँव घड़ी जगत से
हम मन प्राण जुड़ाये ।

अपि-मुनियों की पुण्यभूमि यह
मृग मोरों का घर है
थल थल मन्दिर प्रति मन्दिर शुचि
लिये देवता वर है ।

बट पीपल की नीतल छाया
 घर घर द्वार - द्वारे ।
 कस्ती है आतिथ्य अनोखा
 गारा कर विस्तारे ।

सामगान था हुआ यहीं पर
 सामपान कर - करक ।
 दमी देश के बकड पत्थर
 से गगनल दरके ।

उपनिषदों की इती भूमि में
 धम कम सन फूले ।
 नम्रुति भूली यहीं टालर
 उँच उँच भूल ।

मातृभूमि का गोरव गिरि मा
 वेद पुराण पुरातन ।
 जिसके हृदय ज्ञात से बलफल
 बहता अविरत जावन ।

बन्दी की आह

कभी तुम्हारी घणी में जो
गूये थे दा फूल प्रिये !
व हा आन हृदय में चुभते
हाथर ताव शत्रु प्रिय !

कौन जानता था जावन में
आयेग ये दिवस प्रिये !
तुम सागर क पार रमोगी
हम तडपगे बिना प्रिय !

जिन हाथों ने किया तुम्हारे
मेंहरी का उपचार प्रिये !
उन हाथों में आन बेडिया
का ह भाग भार प्रिय !

य अभेय प्राचारों कारागृह
का यह मनार प्रिय !
एकानी बस एकानी है
यहाँ न कोह द्वार प्रिय !

ला सस्नी सदेश किरण तर
नहीं तुम्हारा यहाँ पिये !
मन का मन में ही धरमाने
मिट जाने दो वहाँ पिये !

कभी भाग्य जागा तो हम तुम ,
भेटेंगे भर धरु पिये ,
मेरी हो तो इसी त्तु पर
वैठो तुम तिशरु पिये !

मोह निवारण

हाय, एक दिन ऐसा होगा
तीरे त्याग कर दूर बहगी—
यह तरंगिनी स्वर्गलता भी
आई वृक्ष का प्यार सहगी ।

दस भुरमुट में हृदय खालकर
गानेवाली यहाँ न होंगी
ये बुलबुल तितली ये भीने
पत्तों वाली मधुरस भारी ।

इन गलियों में स्तम्भलुक् कर
फिरनेवाली ये बालाएँ
बहा रहेंगी ? भर जायेंगी
मनोहारिणी ये कलिकाएँ ।

थ पनघट, खलिहान और ये
दोनों ही में घास उगेगी ।
गिरिवर की सोह चानों में
प्राणों की प्यास जगेगी ।

नौहारिसा

मुग क घर में शोक बसेगा
पयिर बनगा यह अभियामी ।
इम मरपट्ट में साज सोंग
जहा छा रही घोर उदात्ती ।

यद परिवतन ही जीवा द
नृटि इनी क रस को पीती ।
इसीलिए तो मरमर घर भी
नित्य निरन्तर हे बढ जीती ।

स्वप्न

स्वप्नों का आहार चाहिए
स्वप्नों का जल पीने को ।
स्वप्नों की धरती बसने को
स्वप्नों का पट साने को ।

स्वप्नों का मधुपान, स्वप्न
की सुन्दर दुनिया रहने का ।
स्वप्नों की उर्मिल सरिता हो
जय जी चाहे वहने को ।

स्वप्न, स्वप्न हों—मधुर रेसमी
स्वप्न जगत में जाने को ।
स्वप्नों की सगात-मुग्ध हो
ताल-झात कर पान को ।

स्वप्नों क तृण तृण स निर्मित
नीड क्रिय क कोने में ।
स्वप्न हँसी में भूल रह हों
स्वप्न हमारे रान में ।

नीहारिका

सास सास में नव नव स्वप्नों
की बरार के भोंक हों ।
वासन्ती स्वप्नों क बादल
जीवन का पथ रोके हों ।

जल धल भू भ्रम में धा मुल
महिमा के पद बिन्दु जडे ।
स्वप्नों से प्रेरित है, स्वप्ना
की माया से प्राण पडे ।

स्वप्नों की सीपी से वसुधा
ने अगणित मोती पाये ।
स्वप्नों की लहरों से मानव
का उर सागर लहराय ।

खोया वचन

मेर वचन क दृश्य, सचीवा बाग तुम,
पतझट में पावस मेघ बिताग तनो तुम,
इम विगमृति पट्ट को भेद प्रकाश छनो तुम
यट चिरसतापन दाहाधार हना तुम,

क्षण भर के मेरे दचिर विगम बिसाओ ।
मात्रा जीवन में सरस मुग्न-मुस सागा ।

गृह यही पुरातन है पुरखों का मेरा ।
माँ थार तात का यही मनोज्ञ बसेरा ।
मेरी क्रीग को प्रथम इसी ने हरा ।
है मेरा यह मृदु भाव इसी का प्रेर ।

मैं इसमें ही अतरी इसी में खेनी ।
इसमें ही विकसी जीवन जटिल पहली ।

भूली बातों का चित्र हमारा घर है ।
चीती यादों का मित्र हमारा घर है ।
घटनावलियों का दृश्य सजीव अमर है ।
अनगिन लक्षियों का कन्द्र परम सुन्दर है ।

नीहारिका

विजडित है इससे भव्य भावना डेरी ।
अकित है इसमें कथा कहानी मेरी ।

सरिता का थोड़ी दूर मनोरम तट है ।
कण्ठ किंकिण-रव रम्य उधर पनघट है ।
बरीवट सा हा सघन सजीला वट है ।
होता सखियों का जहा नित्य जमघट है ।

चिरपरिचित वह अभिराम क्षितिज का घेरा ।
भावों का पड़ी जहां विचरता मेरा ।

सखियो, वे विसरे गीत आन फिर गाये ।
उलभे वे रेशम-तनुजाल सुरमाये ।
बचपन के अपने दिवस तनिक फिर आये !
मानस की सुरभी स्नेह लता लहराये ।

हो कुमुम-चयन वह और वही अमराई !
गूँधे माला कुछ देर घड़ी मनभाई ।

सरिते, तुम बहती चली जा रही टहरो ।
सुनलो रुक कर दो घड़ी बाद में लहरो ।
शीतल जल क फुट्रूदू इधर भी छहरो ।
अपना धुन में फिर निरत भल ही लहरो ।

मानस की हरलो तपन, हृदय की पीटा ।
फिर करो सतत स्वच्छन्द लाडिली क्रीडा ।

मैं झाड़ू तट ओर लिए घट खाली ।
 तू चला जा रही लीन आपमें आती !
 झाड़ू कछर, क पुज कुज हरियाली ।
 बरसी फूलों के पात पात पर खाली ।

जीते है पाकर नार भीर द्रुमशायी ।
 हरते है श्रम नी भीर पुष्परमशायी ।

सखियों का मुखमय साथ ह त से पूरा ।
 तरा तट क्रीणस्थान बंध है रूरा ।
 पनता है आर हेम यहा पर घूरा ।
 होता है गव मान स्वय ही चूरा ।

यह पुण्यधाम है रुचिर तपोवन आहा ।
 तब तो देनों ने मेरा भाग्य सराहा ।

मेरे बचपन की सखी कोकिला ! थोलो ।
 रसमय वाणी में तुम्हीं जान रस घोला ।
 लींचे अन्तर के तार प्यार से खोलो ।
 दुखभार नरु तो हृदय तुगा पर तालो ।

देखो मैं कितनी दूर हाय बह आठ ।
 तुम सती उधर मैं इधर बीच में खाई ।

ए डगर साराही, तुझे याद व दिन है ।
 तेरे परिचित वैभे ही, उभय पुलिन है ।

नीहारिका

हाँ, उसी भाति तो चरते दूब हरिन है ।
नीदों से राग शिशु मॉंकरहे अनगिन हैं ।

शुनपिक खोतों से बढ कल परत पसारि ।
उडते उडते जा रहे अरण्य किनारे ।

पर हाय, कहाँ वे आन हमारे दिन हैं ?
वे कहाँ हमारे पाले हुए हरिन हैं ?
गल गये अश्रु धन दोनों नयन-नलिन है ।
जो कुल्ल है बचपन के वे बीते दिन है ।

वह सोने का ससार हमारा खोया ।
हा ! सूख गई पथ में ही जीवन-नोया ।

वह वृद्ध दादी कहाँ, कहाँ वह मैया ?
वह कहा पडासिन डगमग जीवन नैया ?
वह कहाँ तृणों से निर्मित कृपक-मडैया ?
है जहाँ वसन्ती फूली फूल कटैया ।

जीवन प्रवाह है धरी न पर वे लहरें ।
आखों से बूँदें अनायास ही छहरें ।

मैं खोल रही हूँ स्मृतियों की जो चादर,
है तार तार में उसके लिपटी मृदुतर
मौसी बचपन के मधुर दिनों की सुवन्दर,
धीरज पर इतना कहाँ कि सवसे चुनकर

मैं सत्ता सत्ता कर धरूँ जगत ऋ धागे ।
 कैसे भयुक्त ले पुत्र शीर्ष हूँ धागे ?

तारों से है तम जडा, रैनि अंधियारी ।
 गोरव मनीत का विभन निन्तु ममक्यारी ।
 जो मैं सहेज कर धरूँ सपदा सारी ।
 वह स्वप्न हो गई शक्ति केशर-क्यारी ।

न भाज रविनी अचल रिक्त पसार ।
 रत्नानर क तट खटी रत्न सब हार ।

रत्न ही तो था आकाश हमारा नीला ।
 कल ही तो भ्रूलो देखी दिधुन् लीला ।
 सूखा है अचल कहीं स्नेह से गीला ?
 यामे थी जिगमो प्यारी सखी सुशीला ।

वह इन्द्ररुप से रगा हमारा गान ।
 चुपके चुपके वह हाय रम गया है कर ?

मैं रनह वचिना, प्रेम वचिता नारी ।
 मैं स्माराशि-वचिना परम दुखियारी ।
 मैं लुटा हुई हूँ वह दसन्त फुलवारी ।
 मुझमें समृति की विकल वेदना सारी ।

है कगक रही जो नित्य शूल वा मेरे ।
 मे सरापोर, मे सुभे चतुर्दिक घर ।

गीदारिजा

म दीपगिरजा हूँ एक तल रही ज्वाला ।
भैं हूँ कर्मों की लीक बटोर फराला ।
मैं हूँ जीवा सर्वस्व वंचिता बाला ।
जिमरी कुटिया में रूच न हाय उजाला ।

भैं घोर घाम में तपी हुई हूँ ब्याली ।
भैं तमाराशि हूँ निशा सिसमनी काली ।

कुतुबनि माया ने दुना जात है बैसा ।
करिषन ययार्थ ने भिन्न हाय है बैसा ।
हे जेद-प्राप्त-श्रेयस्य मात्र ही एसा
मेरे जीवा का गीत गान है जैसा ।

दियर तियरर सच धो दिया श्रेय भ्रम क्यारी ।
है जटाचाल-सी जटिल कर्म-कथा रा ।

बंसी गिरजा हाय भाग्य को घरे ।
इन नयनों ने हाँ स्वप्न बैसामी हर ।
व कहीं भ्रम परियों के चित्र चित्तरे ।
व कहीं तूलिका लम्न भाय है मेरे ?

उठ चलो मुमुक्षु, बुझ दूर उधर हो भायें ।
है जहाँ विषय से टिपटी टलित लताएँ ।

जब सूख चला रा मोत भ्रान जीवा का,
छाया बुहरा सा यहाँ गिराट विजन का,

तव लगती हूँ मैं मधुर दृश्य उस दिन का
दर्शन है किना नव्य भव्य बचपन का ।

है हुई आज ही तो कृतार्थ यह काया ।
मेने भी लोचन लाभ आज ही पाया ।





